पूनम

का बरसा जब कृषि सुखाने!

मेरे बचपन मे मेरे चाचाजी जब तब मुझे सॉपों की कहानियॉ सुनाया करते थे। हर बार उनसे टकराने वाला सॉप पहले से बड़ा हुआ करता था। अपनी दोनो बॉहें फैलाकर वो मुझे सॉपों की लम्बाई बताया करते थे। बॉहों के फैलाव का एक अन्त था, पर उनके सॉपों की लम्बाईयों का नही। उनके उन्हे मार देने का दम्भ उनकी लम्बाईयों से जूड़ा था और सॉपों की लम्बाईयॉ उनके खतरनाक और जहरीले होने से। मुझसे भी मेरे जीवन मे कई लड़कियॉ टकराई, ठीक उसी तरह जैसे मेरे चाचा को उनके सॉप। मै एक को दूसरे से सुन्दर इस वजह से नही कह पाता, क्योंकि इनकी सुन्दरता किसी एक मापदन्ड से नही मापी जा सकती हैं। मेरे मन के पास ऐसा कोई मापदन्ड भी नही है। मेरे मन के मन पर जिसकी भी थाप मिली, उसे वो बस सुन्दर ही कहा। जीवन मे खोना और पाना तो चलता ही रहता है। इससे किसी की सुन्दरता को क्या लेना देना है! ऐसी ही एक खोई पर, सुन्दर लड़की मुझे बर्लिन के शुरू के दिनों मे मिली थी। उसका पूरा नाम पेट्रा जेमन था।

न जाने कितने दिनों के बाद आज ऐसी निखरी धूप निकली थी। अप्रील का आखिरी सप्ताह चल रहा था। बर्लिन के पेंड़ पौधे लगभग हरे भरे हो चले थे। यहॉ वहॉ नारसिशेन और क्रोकूसों मे भी फूल आ चुके थे। ट्यूलिप्स की कलियॉ भी बड़ी हो चली थी। आये दिन की बरसातों से बर्लिन बिल्कुल धुल चुका था। रविवार का दिन था। एक जैकेट कन्धे पर डाल कर मै यूँ ही स्टाटपार्क की ओर बढ चला। वोल्फेनस्टाईन पुल के बाद ही हिन्डेनबुर्ग डाम आया। सॉय सॉय करती गाड़ियॉ इस रस्ते पर दौड़ रही थीं। मै आम्पल के हरे होने का इन्तजार कर रहा था कि अचानक एक गाड़ी हल्का सा हॉर्न देकर अपनी रफ्तार कम की और सड़क के किनारे जा रूकी। एक भरे बदन की औरत गाड़ी से उतरकर मेरी तरफ बढी। पास आकर जब वो मुझसे हिन्दी मे ही पूछीः कैसे हो प्रमोद! तो एकबारगी मै दंग रह गया। उसने मुझे इतने वर्षो के बाद कैसे पहचान लिया! बाद के दिनो मे पूछने पर उसने बताया था कि मुझमे ऐसा कोई खास बदलाव नही आया है। मैने उसे उसके तील से पहचान लिया, जो उसके ऊपरी ओंठ के ऊपर दाहिनी तरफ था। पेट्रा का बदन काफी भर आया था, पर उसका चेहरा आज भी उतना ही आकर्षक था, जितना हुआ करता था। अब इतने वर्षो के बाद मुझे भी उससे कौन सी शिकायत बाकी रह जानी थी! सब कुछ भूला कर मैने उसे गले से लगा लिया।

ःमै कभीं नही सोची थी कि तुम इस तरह फिर बर्लिन मे मिल जाओगे।

ःसिर्फ सोचने से ही कोई किसी से कहॉ मिल पाता है! तुमने चाहा ही न होगा पेट्रा। खैर हटाओ इन बातों को। अचानक मेरा मन कसैला होने को आया और इस लड़की से मेरी लगभग आखिरी मुलाक़ात ऑखों के सामने नाच गई।

नेस्पीताल हिन्दी लाइब्रेरी के पोर्टिको ने इसी ने मेरा हॉथ थाम कर मुझसे पूछा थाः क्या बात है प्रमोद! तुम इतने खींचे खींचे क्यों रहते हो! टेलीफोन करना भी बिल्कुल बन्द कर रखा है। सामने पड़ने पर बिल्कुल अन्जान बन जाते हो। आखिर क्यों!

ःतुम वजह जानना चाहती हो! तो सुनो। बड़े स्थिर भाव मे मैने उसे बतायाः मै तुमसे कोई सम्बन्ध नही रखना चाहता। ये जो त्रिकोणीय सम्बन्ध हमारे तुम्हारे और विकाश के बीच है, इसमे मेरा दम घूँटता है। मै तुम्हे विकाश के संग नही बॉट सकता। जहॉ तक मेरा ख्याल है, विकाश भी तुम्हे मेरे संग नही बॉटना चाहेगा। कभीं कभीं मुझे तुम जैसी लड़कियों के सोचने पर ही अफसोस होता है। बिना सोचे समझे किसी के संग धम्म से एक नाव मे बैठ जाती हो और ये चाहती हो कि एक दूसरा जीवनपर्यन्त अपनी सूखी और खाली नाव इस नाव के संग खेता रहे, ताकि मुसीबतों मे तुम अपनी नाव छोड़ कर दूसरी नाव मे आ सको। विकाश या प्रमोद! ये फैसला तुम्हे ही करना है।

ये मै जानता था कि अब पेट्रा को विकाश से कोई अलग नही कर सकता, फिर भी ये मै उसके मुँह से सुनना चाहता था।

ःतुम्हे ये खाली नाव वाली बात कम से कम मुझसे नही कहनी थी। अब मै विकाश के नाव मे बैठ चुकी हूँ। अब मुझे न तो किसी किनारे की आस है और न किसी भॅवर का ही डर। अब मै तुम्हारा रास्ता कभीं नही रोकूँगी, कह कर पेट्रा लाइब्रेरी की तरफ बढ चली। ये पेट्रा का आखिरी फैसला था।

पेट्रा की एक और बात मुझे बेहद आहत की थी। मै सब कुछ भूल कर सिगमून्डसहोफ मे उसे निस्वार्थभाव से अपना सम्बल उन दिनों देना चाहा था, जब विकाश उसे अकेला छोड़ कर मागदेबुर्ग जा कर रहने लगा था। उसी विकाश के कहने पर एक दिन पेट्रा ने मुझे मिलने जुलने से भी मना कर दिया। इस मिलने जुलने की शुरूआत उसी ने की थी। मेरी गलती ये थी कि मै अपना मन कठोर नही कर पाया और अपना सारा अपमान भूल कर पेट्रा के प्रति फिर से कोमल बन गया था।

ठीक यही नाटक मै आज भी उसके संग कर रहा था। तरीका तो ये था कि मै उसे पहचानने से ही इनकार कर देता और आगे बढ जाता, पर कहॉ कुछ हो पाता है ये सब संवेदनशीलता के सफर मे! निस्पृह उसका हाल चाल पूछने बैठ गया।

ःबताने के नाम पर क्या रह गया है अब मेरे पास! थोड़ा बहुत तो तुम ऐसे भी जानते हो मेरे बारे मे। और जो बचा खुचा है, वो भी बस ऐसे ही है।

ःडोरियान कैसा हैं! विकाश से तुम्हारे सम्पर्क हैं या नही!

ःविकाश से तो कोई सम्पर्क नही है। मुझे तो ये भी पता नही है कि इन दिनो वो कहॉ है! न जाने कितने पत्र मैने उसके गॉव के पते पर डाले! एक का भी जबाब नही आया। डोरियान भी मुझे अकेला छोड़ कर इस संसार को विदा कह गया। दो बसन्त भी नही देख पाया।

ःक्या हो गया था उसे!

ःउसे प्रोटीन एलर्जी थी। न तो मेरा दूध पचता था और न बाहर का। समय से डिटेक्ट नही हो पाया।

ये बता कर पेट्रा रोने लगी और रोती रही। अब मै भी उसे कौन सी सान्तवना देता!किस मन से देता!
मै उसे ये बस कहते कहते रह गया कि हमारे भूमि पर हमारे चरित्रनिर्माण के पीछे न जाने कितने देवी और देवताओं का हॉथ होता है। सिर्फ सरस्वती ही एकमात्र देवी नही हैं। उन्होने विकाश पर अपनी भरपूर कृपा की. लेकिन जब उसे अपने किये की सजा मिलेगी. तो वो भी उसे नही बचा पायेंगी। उस उन्मत को तो इसका भी आभास नही है कि पेट्रा और डोरियान के रूप मे उसने क्या कुछ नही खो दिया। इस तरह के एकान्गी लोग बड़े एकाकीपन मे जीते और मरते है।
पेट्रा से मेरी ज्यादे बातचीत नही हो पाई। हॉ इतना जरूर पता चला कि जिस पोलीकूम मे मै अपने कार्डियोलॉजिस्ट के पास जाया करता हूँ. वो उसी मे फिजियोथेरोप्याट हैःहिन्दी की पढाई तो मुझे बन्द करनी पड़ गई प्रमोद। किसी तरह मर जीकर मैने ये कोर्स कर लिया. वरना आज सड़कों पर होती।
ःचलो ये एक अच्छी बात है। तुमसे मुलाकात होती रहेगी। अब तो विकाश भी यहॉ नही है. जो तुम्हे मुझसे मिलने से मना करेगा।
कहके मै स्टाटपार्क की ओर बढ चला। सुबह के दस भी नही बजे होंगे और ये पार्क जोगिन्ग और वाकिन्ग करने वालों से खचाखच भर चला था। पार्क की शायद ही ऐसी कोई बैंच रही होगी. जो खाली बची हो। विर्कबुशस्ट्रासे को पार करके मै इस पार्क के दूसरे हिस्से मे आ गया। वहॉ थोड़ी कम भींड़ थी। एक भींगे बैंच को साफ करके मै वहीं बैठ गया। सामने आहोर्न का एक बहुत ही पुराना पेंड़ था. जिसके पत्तों से प्रकाश छन छन कर मुझ तक आ रहा था। जब तब छोटे छोटे बच्चे अपने सायकलों की घन्टी बजा कर सामने से गुजर जाते थे। मै बैठा बस पेट्रा की बेशरमी के ही बारे मे सोचे जा रहा था। जब देखो रास्ता रोक कर खड़ी हो जाती है। आज भी उसे गाड़ी रोक कर मेरे पास आने की क्या जरूरत थी!मुझे आहत करने मे उसने कोई कोर कसर थोड़े ही उठा रखी थी।
विकाश से मै व्यक्तिगत कभीं नही मिला गोकि हम एक ही हॉस्टल मे रहते थे। सिर्फ हमारे फ्लोर अलग अलग थे। वो पॉचवी मंजिल पर रहता था और मै ग्राउन्ड फ्लोर पर। हॉ दूर से मैने उसे कई बार देखा था. पर दूसरे भारतीय दोस्तों से अक्सर उसके बारे मे सुनता रहता था। वो मेरठ के किसी एक गॉव का रहने वाला था। काला कलूठा और ऊपर से एक ऑख का काना। उसका पूरा नाम विकाश शिकार था। बर्लिन के फ्री यूनिवर्सिटी मे वो कमप्यूटर साईन्स का स्टूडेन्ट था। उस जैसा ब्रिलियेन्ट स्टूडेन्ट इससे पहले इस यूनिवर्सिटी मे नही आया था। अपने पहले वर्ष मे ही वो इतनी फर्राटेदार जर्मन बोलने लगा था कि जर्मन तक दंग रह जाते थे। विकाश के सर पर मॉ सारदा का वरस्थ हॉथ था। अपनी फैकल्टी मे वो हर जर्मन की जूबान पर था. पर इन्डियन स्टूडेन्टों के बीच वो सिर्फ उपहास का विषय था। न जाने क्यों लोगों को उसका चारखाने की लुंगी. मॉ का बूना डिजाईनदार आधे बॉह का स्वेटर. सैन्डोबनियान या फिर पोलिएस्टर के सिले पैंट पहनना पसन्द नही था। लोगों को उसके चारखाने के मफलर से कानों का ढॅकना भी पसन्द न था। लोगों को उसकी कोई बात ही पसन्द नही थी। कीचन मे रोटी सेंकना. बनी दाल को तड़का देना. लोटे से पानी पीना. खाने के बाद डकारना. बाश बेसिन मे खंखार खंखार कर कुल्ली करना. ये सब कुछ किसी को भी पसन्द नही था। ःसाला अपने देश की छवि मट्टी मे मिलाये जा रहा हैः
यही था विकाश. जिसके पीछे पेट्रा दीवानी थी। पेट्रा को वो पूनम कहके बुलाता था। उसे पेट्रा की सूरत पूनम ढिल्लो से बड़ी मिलती जुलती लगती थी। विकाश ही क्यो!दूसरे इन्डियन्स और पाकिस्तानी भी जर्मन लड़कियों के बीच श्रीदेवी. रतिअग्निहोत्री. जया प्रदा और न जाने किस किस को ढूॅढा करते थे!
मेरी समझ मे सिर्फ एक बात नही आ रही थी कि न जाने विकाश या उसके मॉ बाप की किस प्रार्थना पर खुश होकर सरस्वती मॉ उस पर ज्ञान का खजाना ही लूटा दी थीं!कॉमनरूम मे बैठा अकेला वो दस दस जर्मनों के संग शतरंज खेलता रहता था. और पेट्रा बैठी अपलक उसे निहारती रहती थी और मै ईर्ष्या की अलाव मे भूनता रहता था।
पेट्रा से मेरी पहली मुलाकात नेस्पीताल हिन्दी लाईब्रेरी मे हुई थी। बर्लिन आये मुझे छ महीने हो चले थे और मै टूटी फूटी जर्मन बोलने लगा था। फ्री यूनिवर्सिटी के इन्सटिच्यूट ऑफ इन्डोलॉजी और आरखियोलॉजी के अध्यक्ष प्रो नेस्पीताल हुआ करते थे। उन्हे हिन्दी से बेहद लगाव था। उन्ही के प्रयास से ये लाइब्रेरी सम्भव हो पाई थी। फ्री यूनिवर्सिटी के वाईस चान्सलर ने इसके उदघाटन के दिन ही इसका नाम नेस्पीताल हिन्दी लाइब्रेरी रख दिया था। प्रो नेस्पीताल कई जर्मन उपन्यासों का हिन्दी मे और कई हिन्दी उपन्यासों का जर्मन मे अनुवाद कर चुके थे। उन्होने एक जर्मन हिन्दी डिकशनरी भी लिख रखी थी। अपने बातचीतों मे भी वो शास्त्रीय हिन्दी का ही इस्तेमाल करते थे।
लाइब्रेरी के काऊन्टर पर दो लड़कियॉ काम कर रही थीं। इन्ही मे से एक मेरे पास आई थी और या कहके मेरे कुछ कहने का इन्तजार करने लगी थी।
हकलाते हुए अपनी टूटी फूटी जर्मन मे मैने उसे बताया कि मुझे हिन्दी के कुछ उपन्यास लेने है।
मुझे लाइब्रेरी की चाभी पकड़ाते हुए उसने बताया कि पहली मंजिल पर लाइब्रेरी है। एक साथ मै छ किताबें एक महीने की अवधि के लिए ले सकता था।
पहली बार एक जर्मन लड़की इतनी आत्मीयता के साथ मुझसे बातें की थी। उसकी खनखनाती आवाज मेरे कानों मे गूॅजे जा रही थी।
मै छ किताबें लिये वापस काऊन्टर पर आया। उसने मुझे छ स्लिपें पकड़ा दीं। । मुझे ही इन किताबों के नाम. इनके लेखकों के नाम इत्यादि इन स्लिपों मे भरने थे। स्लिप भरकर मै जो भी किताब उसे पकड़ाता था उन्हे वो पल भर के लिए निहारने लग जाती थी। जब मै सारी स्लिपें भर चुका था. तो वो किताबें मुझे पकड़ाते हुए पूछीःइन्डिया के किस पार्ट से हो!
ःनौर्थ से
ःनौर्थ में कहॉ से!
ःबनारस से. जिसे वाराणसी या फिर काशी भी कहा जाता है।
ःमैने सुन रखा है कि वहॉ के लोग काफी अच्छी हिन्दी बोला करते है। जब उसने ये हिन्दी मे कहा. तो मै दंग रह गया।
ःआपकी हिन्दी भी बेहद अच्छी है। आपने इसे कहॉ से सीखी!

ःमै इसी इन्सटिच्यूट में हिन्दी इन्डोलॉजी पढती हूँ।
इसके बाद मै जब भी उससे मिला. हिन्दी मे ही बातें की।आनन फानन किताबें पढ कर उन्हे वापस करने पहुँच जाता था।कभीं कभीं तो बिना पढे ही।इन्ही मुलाकातों मे न जाने कब हम आप से तुम पर आए. ये मुझे याद नही है।अब मै उसे उसके नाम से बुलाने लगा थाःपेट्रा।वो भी मुझे बेझिझक प्रमोद कहके पुकारने लगी थी।मुझे उसकी जर्मन एक्सेन्ट के साथ बोली गई हिन्दी बड़ी सुन्दर लगती थी।जी करता था कि एक न बीतने वाली अवधि तक बैठा उसकी हिन्दी सुनता रहूँ।उन दिनो एक बढते लत्तर की नाई मुझे एक मानसिक सहारे की भी घनघोर आवश्यकता थी. परन्तु मेरे और पेट्रा के बीच का सम्बन्ध औपचारिकता की सीमा न लांघने की एक कसम खाये बैठा था।हमारी मुलाकातों को भी वो बेहद संक्षिप्त करके रख देती थी।मै उसे अपनी पूरी बात तक नही कह पाता था और वो उठ के चल दने का उपक्रम करने लगती थी।मेरा मन सदैव उसी के इर्द गिर्द भटकता रहता था।
सिर्फ एक ही दिलासा था मेरे मन कोःकिसी भी मुलाकात या फिर टेलीफोन पर पेट्रा मेरे प्रति अमित्रवत कभीं न हुई।बिना किसी तप के किसी को जीवन मे कभीं कोई मूल्यवान चीज मिली है कभीं!मै जान बूझ कर अब उससे व्यक्तिगत सवालें नही किया करता था।हमेशा ये डर लगा रहता था कि वो किसी लड़के का नाम न ले ले।मै अपने भगवान से भी इस बात की विनती करता रहता था कि वो इस अनछूए फूल को मेरी ही झोली मे डालें।
उसने मुझे तो कभीं न्यौता तो नही दिया. परन्तु मेरा न्यौता भी कभीं नही टाला।अपने कमरे मे बुलाने की हिम्मत तो मुझमे नही थी. पर स्लाख्टेन जे पर हम अक्सर मिला करते थे।काफी दिनो के बाद मुझे पता चला कि वो भी उसी हॉस्टल के एक दूसरे ब्लॉक मे रहती है. जिसमे मै रहता हूँ।मै सजा धजा किसी लॉन की बैन्च पर बैठा उसका इन्तजार करता होता था और वो चप्पल चटकाती दूर से आती दिखती थी।मेरा हृदय सीना फाड़ कर बाहर आने के लिए उतावला हो उठता था।मै समान्य नही रह पाता था।
ऐसी ही एक मुलाकात मे उसने अनायास एक विकाश नाम के भारतीय लड़के का जिक्र किया और पूछा कि क्या मै उसे जानता हूँ!
ना कहने पर वो विकाश के बारे मे बताने लगीःतुम्हारे ही प्रदेश का है।मेरठ का रहने वाला है।तुम्हारे ही विंग मे पॉचवे फ्लोर पर रहता है।बर्लिन आये उसे तीन वर्ष हो गये हैं।इनफॉरमैटिक का स्टूडेन्ट है।बड़ा ब्रिलियेन्ट स्कॉलर है।अमेरिका और फीनलैंड की कई नामी गरामी फर्मे तो उसके पीछे हॅाथ धोकर पड़ी हैं।उसका फोरडिपलोम भी पूरा नही हुआ है और उसके पास ऑफर्स ही ऑफर्स हैं।बड़ा सीधा साधा जीवन है उसका।यूरोप की कोई भी रोशनी उसे चकाचौंध नही कर पाई है।मै शाम का खाना अक्सर उसी के संग खाती हूँ।दाल रायता चपाती तरह तरह की सब्जियॉ और न जाने क्या क्या!मै तुम्हे भी उससे मिलावाऊँगी।वो तुम्हे भी पसन्द आयेगा।पेट्रा का कहा एक एक शब्द मेरे मन पर एक घन की तरह पड़ रहा था।
मै इस बात को जानता था कि बर्लिन मे एक से एक टेलेन्टेड इन्डियन स्टूडेन्टस रहते हैं।उनकी वजह से हमारे देश का मान सम्मान भी है।हमें जर्मन बड़े आदर और मान के साथ देखते हैं।उनके समझ मे एक बात आज तक नही आती है कि एक गरीब देश की मॉए कैसे अपनी घोर दरिद्रता मे इस तरह के हीरे उगलती रहती हैं!मुझे विकाश के मेधावीपन से कोई परेशानी नही थी।मुझे परेशानी थी पेट्रा से उसके परिचय से।मेरी परेशानी थी उसके प्रति पेट्रा के झुकाव से।
आज पहली बार पेट्रा की बात बीच मे ही काट कर मै उठ पड़ा और चलने को हुआ।पेट्रा ने मुझे रोका नही।मेरे उठ कर चले जाने की उसे परवाह ही न थी।मेरा मन डूबते उतराते उदासी की तल पर जा चुका था।
मन कठोर करने के अलावे मेरे पास दूसरा कोई विकल्प नही था।स्पर्धा और विजय जैसे मंचों से मै बचपन से ही घबराता आया था।उससे भी कहीं बहुत ज्यादे मै अपनी हार से घबराता था।इससे पहले कि कोई मुझे ठूकराये. मै ही उसे ठूकरा कर आगे बढ जाता था।लपक के बढ़के या फिर किसी को केहूनी मारके कुछ पाने से न पाना ही मुझे अच्छा लगता था।इस अध्याय को बन्द करने मे ही मैने अपनी भलाई समझी. जो उतना आसान नही था. जितना मैने समझ रखा था।फिर भी मै पेट्रा से बिलग हो गया।इसके बाद वो मुझे जब भी लाइब्रेरी मे दिखी. हलो के आगे कुछ कहना मैने जरूरी नही समझा।किताबें ली और सर झुकाये लाइब्रेरी छोड़ दी।
मै स्लाखटेनजे का हॉस्टल छोड़ कर सिगमून्डसहोफ के एक हॉस्टल मे आ गया।एक अजीब सा माहौल था यहॉ।इस काम्पलैक्स मे इन्डियन पाकिस्तानी बॉगलादेशी और श्रीलंका के तमाम स्टूडेन्टस रहते थे परन्तु इनमे से शायद दस प्रतिशत ही जर्मनी पढने के ख्याल से आये थे।बाकी या तो पैसा जोड़ने या फिर किसी तरह यहॉ बसने के ख्याल से आये थे।जत्थों में घूमते थे और एक दूसरे की टॉगे खींचते थे।इनके बीच दबाके दारू पी जाती थी और पैसों से तीन पत्ती खेली जाती थी।शायद ही ऐसा कोई फ्लोर रहा होगा. जिसका कीचन भारतीय मसालों से न महकता हो।जम कर इन्डियन खाने बनते थे।ऐसे माहौल मे एक अच्छे मित्र को ढूँढना मुझे असम्भव ही लग रहा था।दिन ब दिन मेरा जीवन घोर एकाकी होता चला जा रहा था।खाली समयों मे मेरे पास बस दो काम होते थे।पहला बर्लिन मे निरुद्देश्य घूमना या फिर नेस्पीताल लाइब्रेरी से लाई किताबें पढना।
अब हम बर्लिन मे लगभग दो छोरों पर रहते थे।वो त्सेलेनडोर्फ मे और मै टीयरगर्डेन मे।जब पैसों के लिए मुझे छुट्टियों मे काम करने की नौबत आई. तब नेस्पीताल लाइब्रेरी भी जाना बन्द हो गया।
हमारे हॉस्टल से लगी एक कनाल बहा करती थी।इसके किनारे ट्राऊबाइडे के विशाल विशाल पेंड़ लगे हुए थे. जिनकी डालियॉ पानी तक झुकी हुई थीं।कनाल के दोनो तरफ कच्चे रास्ते बने हुए थे।यहॉ वहॉ बैन्चे लगी हुई थीं।पास ही एक पुलिया भी थी।इस पुलिया से लगी पानी तक जाने के लिए कनाल के दोनो तरफ सीढियॉ बनी हुई थीं।गर्मी के दिनो मे मै प्रायः हर दिन अपना कुछ समय इन सीढियों पर गुजारता था।विकएन्ड मे तो मै सुबह ही सुबह कम्बल तकिया लेकर वहॉ जा पहुँचता था।कुछ सैन्डवीच भी साथ ले जाता था।गई शाम तक मै वहॉ से हिलता तक न था।एक दिन अचानक इस पुलिया पर मुझे विकाश का हॅाथ थामे पेट्रा दिखी।कई बार तो मुझे अपनी ऑखें तक मलनी पड़ गई।बर्लिन के इस सेक्टर मे आखिर ये क्या कर रहे हैं!जब ये थोड़े समीप आये. तो मैने देखा कि पेट्रा गर्भवती भी है।ये धीरे धीरे आगे बढे जा रहे थे।जब ये हमारे काम्पलेक्स की ओर मुड़े. तो मै चकराया।कहीं ये सिगमून्डसहोफ मे तो रहने नही आ गये है!
मनुष्य तीन कालों मे जीता है. परन्तु मै सिर्फ अतीत मे जीता रहा हूँ।भविष्य तो ऐसे भी मेरे लिए अविदीत ही नही. बल्कि कुछ समयों

के बाद आने वाला कल है.मै वर्त्तमान को भी तब ही छूता हूँ.जब मुझे उसे छूना पड़ता है।चूँकि मै अतीत मे जीता हूँ.मुझे यादों का सहारा लेना पड़ता है।ये यादें मुझे उन हर मुकामों पर ले जाती हैं.जो मेरा जीया होता है.मेरा भोगा होता है।आज ये यादें मुझे पेट्रा के पास ले जा पटकी थीं। मै जब से पेट्रा से मिला था.मेरा ध्यान उसी के इर्द गिर्द अँटका रहता था।मै उसे जब भी बुलाता था.आ जाती थी।जो भी उसके सामने रखता था खा लेती थी.फिर भी हमारा सम्बन्ध वहीं खड़ा था।मै अपने व्यक्तित्व के एक एक रेशे खोल कर उसके सामने रख देता था.फिर भी वो मुझसे प्रभावित नही दिखती थी।मै अक्सर बैठा सोचा करता था कि आखिर पेट्रा और विकाश का सम्बन्ध किस हद तक बढ गया होगा।ज्यादे से ज्यादा वो बैठ कर इधर उधर की औपचारिक बातें ही तो करते होंगे।छूने पकड़ने की हिम्मत उस मेरठवासी मे कहाँ से होगी!पहली बार तो माँ का आँचल छोड़ कर घर से बाहर निकला है।आज वही पेट्रा गर्भवती घूम रही है।विकाश को मैने कितना कम करके आँका था!
सिगमून्डसहोफ के हाऊस पी मे एक गोआ का लड़का एन्थनी रहता था।उसी से मुझे पता चला कि पेट्रा उसी के फ्लोर पर तकरीबन एक महीने से रह रही है।जब मैने उससे विकाश के बारे मे पूछा.तो बताने लगा कि वो मागदेवुर्ग चला गया है।पिछले वीकएन्ड मे कुछ घन्टों के लिए बर्लिन आया था।सिगमून्डसहोफ मे एन्थनी सब की जूबान पर थाःसाला इन्डियन होकर अपने को गोआ का बताता है।अपना धर्म तक बदल रखा है।अन्ग्रेज बनता फिरता है।अब पेट्रा की बारी थी।एकमत से उसे रंडी कहा जाता था।बिना विवाह किये बिस्तरों पर गिरनेवालियों को रंडी ही तो कहा जायेगा।विकाश अपने आप को निर्दोष बताता था।पेट्रा को हर कीमत पर उससे एक आईनस्टाईन जैसा बच्चा चाहिये था।उसके साथ पेट्रा ने धोखा किया था।यही वो जन समाज मे पेट्रा के खिलाफ फैला रखा था।विकाश की निर्दोषिता मै कई इन्डियनों से सुन चुका था।
हमारे जीवन मे हर सम्बन्ध दो चार मुलाकातों और चन्द मोड़ों के बाद एक कभीं न भूले जाने वाले सम्बन्ध का दर्जा पा लेता है।हम बस उसे भूला दिये गये सम्बन्ध का दम्भ मात्र भरते है।अपनी रूठी भावनाओं को मै नही मना सकता था.पर पेट्रा को सदा के लिए भूल जाने का मै अभिनय ही तो कर रहा था।वो मेरे लिए बेमानी थोड़े ही थी।
एक दिन शाम को फ्लोर का ही एक लड़का मेरे दरवाजे पर दस्तक देकर जोर से टेलीफोन फ्यूर डीख कह गया।फोन पर पेट्रा थीःकैसे हो प्रमोद!मै पेट्रा बोल रही हूँ।मुझे पता नही था कि तुम यहाँ रहते हो।एन्थनी से पता चला।समय निकाल कर कभीं आओ न।शाम का खाना साथ खायेंगे।हाऊस पी मे मै कमरा नः सात सौ नौ मे रहती हूँ।इन्कार न करना।
एकबारगी मै दंग रह गया।थोड़ा बहुत गुस्सा भी आया।आखिर पेट्रा मुझसे चाहती क्या है!
ःविकाश भी आया है क्या!!
ःनही नही
ःफिर मेरी समझ मे एक बात नही आ रही है कि तुम मुझे क्यों बुला रही हो!कोई खास बात है क्या!
ःकोई खास बात तो नही है।ऐसे ही तुम्हे देखने को मन कर आया।आज ही आओ न!
ःठीक है।कितने बजे आऊँ!
ःशाम को पाँच बजे के बाद कभीं भी।
ःकिसी चीज की जरूरत हो तो बता दो।साथ लेता आऊँगा।
ःनही नही मुझे किसी चीज की जरूरत नही है।बस तुम आ जाना।
ये मेरे लिए पेट्रा का पहला न्यौता था।मै एकबारगी सब कुछ भूल गया और अपना सारा अपमान पी गया।लगभग निष्क्रिय सा पड़ा मन एक मीठी सी करवट बदला।
पेट्रा के कमरे की दीवारें विकाश के गाँव मे उसकी ली गई तश्वीरों से भरी पड़ी थी।गन्दा बसाता जलकुम्भियों से भरा तालाब.एक कुँआ के टूटे फूटे जगत पर दतवन करते लोग.लगभग ढहा हुआ गाँव का प्राईमरी स्कूल.विकाश की हुक्का पीती कूबड़ी दादी.एक ईंटे पर बैठे नाई से दाढी बनवाते उसके पिता.एक कच्ची रसोई मे कंडों मे आग जगाती विकाश की माँ.दालान मे एक बड़े से ताखे पर रखे पानी के दो बड़े कून्ड.ओखली मे चावल कूटती विकाश की चाची.घर के पिछवाड़े गोईठे पाथती एक महरी.चक्की पर आटा पीसती खुद पेट्रा।इनके अलावे विकाश के साथ भी पेट्रा की कई तश्वीरें थी।किसी मे वो विकाश के संग बैलगाड़ी में बैठी है तो किसी मे नहर के पानी मे अपने पैरों को डाले।मै घूम घूम कर तश्वीरें देखे जा रहा था।
ःइन्डिया कब गई थी!
ःइसी वर्ष।मार्च मे।
ःकितने दिनों के लिए!
ःचार सप्ताहों के लिए।
ःकैसा लगा तुम्हे हमारा देश!
ःबहुत सुन्दर।वापस आने का मन ही न करता था।
ःमै देख रहा हूँ कि तुम विकाश से आस मे हो।कौन सा महीना चल रहा है!
ःपाँचवाँ।
अनायास वो मेरे दोनो हाँथों को अपने हाँथों मे ले ली और बड़े प्यार से पूछीःतुम कैसे हो!कैसा लग रहा है तुम्हे जर्मनी!ये पल देखते ही देखते इतना स्नेहिल बन गया कि मै बता नही सकता.पर इसे पेट्रा ने क्षण भर मे अपने एक सवाल से बोझिल कर दिया।
ःअपनी नाव मे किसी को बिठाये या अकेले ही सफर हो रहा है!
ःये तुम्हारी उत्सुकता है या मुझे आहत करने का अभियान!यही पूछने के लिए बुलाया था!
ःमुझे माफ करना प्रमोद!ये मेरी बेवकूफी थी।बीटे बीटे!कहके उसने वातावरण को सम्हाल लिया।
पेट्रा ने मेरी प्लेट मे एक अधपकी खिचड़ी डाल दी।इसमे पड़े आलू तक नही पके थे।साथ मे पीने के लिए एक ग्लास आरेंज जूस

.जिसकी मदद से किसी तरह ये खिचड़ी मे अपने गले के नीचे उतार रहा था।पेट्रा को अपनी बनाई खिचड़ी बड़ी स्वादिष्ट लग रही थी।वो कीचन मे जा कर फिर से अपना प्लेट भर लाई थी।

विकाश और पेट्रा का सम्बन्ध बिल्कुल लड़खड़ा चला था.पर खत्म नही हुआ था।तमाम निराशाओं के बाद भी वो विकाश को प्यार करती थी।उसका विश्वास था कि विकाश का बच्चा सारी टूटी कड़ियों को फिर से जोड़ देगा।एक अजीब सा धैर्य था पेट्रा के पास।नाराजगी तो उसे दूर से भी नही छू गई थी।

वो बैठी विकाश के गॉव के बारे मे बताये जा रही थी।विकाश के परिवार मे उसे बड़ा लाड़ प्यार मिला।विकाश के चाचा से उसकी बड़ी पटती थी।ये लोग जाति के चमार थे।गॉव के एक बड़े काश्तकार की जमीने गोड़ते थे.पर इनके पास अपनी निजी जमीने भी थीं।मकान कच्चा था.पर पेट्रा को बड़ा आरामदेह लगता था।एक दो गाय भैंस भी दालान मे बँधे पड़े थे।मकान के एक हिस्से मे सिर्फ औरतें रहती थी।पेट्रा को अलग से एक सजा सजाया कमरा मिला हुआ था।दिन मे तो विकाश उससे अपनी ऑखें चुराता फिरता था.पर घनी रात मे सबसे नजर बचा कर उसके कमरे मे आ धमकता था।

बातो ही बातों मे रात के ग्यारह बजने को आये।समय का पता ही न चला।पेट्रा को धन्यवाद देने से पहले इतना जरूर कह आया कि थोड़ा बहुत मुझे उसकी निराशाओं का आभास है।मै सदैव उसकी मुसीबतें बॉटने को तैयार हूँ।रात बिरात उसे जब भी मेरी जरूरत पड़े.फोन कर दिया करे।मै हाजिर हो जाऊँगा।वो सिर्फ एक बात का ख्याल रखे कि विकाश का मुझसे सामना न हो।मै उससे मिलना नही चाहता।

इस तरह दो महीने गुजरने को आये।खरीददारी के लिए जाने से पहले मै नियमित पेट्रा को फोन करके उससे भी उसके जरूरत की लिस्टें ले लेता था और उसके कमरे तक सामान पहुँचा दिया करता था।खाने वगैरह मै कम ही बनाता था.पर जब भी बनाता था .उसका एक हिस्सा उसे दे आता था।यदा कदा मुझे विकाश के बर्लिन आने का भी पता चलता रहता था।देने के लिए पैसे वगैरह तो उसके पास नही होते थे.पर झगड़ने के पचासो कारण वो जेब मे रखता था।पेट्रा के पास अपनी स्कालरशीप के पैसे होते थे।थोड़े बहुत पैसे उसे अपनी मॉ से भी मिल जाते थे।इसका भी एक हिस्सा वो हॅथिया लेता है।

मुझे तो वो स्लाख्टेनजे से ही जानता था।जब उसे मेरे और पेट्रा के मुलाकातों का पता चला तो वो तिलमिलाया।सारी बातें तो मै नही जानता.पर एक दिन फोन पर अप्रत्याशित पेट्रा कहने लगी कि विकाश मेरे और उसके सम्बन्ध को बड़ा व्यक्तिगत लेता है।अब वो मुझसे कोई सम्बन्ध नही रखना चाहती है।

ये सुन कर मै स्तब्ध रह गया।मै उससे कहते कहते रह गया कि जिस सम्बन्ध को वो खत्म करना चाहती है.उसकी शुरूआत भी तो उसी ने की थी।बेशरमी की भी एक हद होती है।

बर्लिन मे हॉस्टलों का जीवन मुझे ऐसे भी रास नही आ रहा था.परन्तु दूसरा विकल्प मेरे पास नही था।एक नियमित आय होती.तो एक सस्ता सा मकान ही ले लेता।कब तक हॉस्टल बदलता रहूँगा! एक बार तो बर्लिन छोड़ कर दूसरे शहर मे जाने की भी सोची।हर वक्त पैसा आड़े आ जाता था।

किसी तरह मन को मार कर मै सिगमून्डसहोफ मे रह तो गया.पर भूल कर भी मै हॉस्टल पी की तरफ न देखता था।

भाग्य से मुझे अपने फैकेल्टी की ही एक लड़की से उसके दो कमरे के अपार्टमेन्ट मे रहने का ऑफर मिला।किराया भी कोई खास नही था।वो दो वर्षो के लिए आस्ट्रेलिया जा रही थी।समस्या सिर्फ एक बात की थी।इस हॉस्टल के अपार्टमेन्टस सिर्फ पढने वाली लड़कियों को दिये जाते थे।उन लड़कियों को जो विवाहित होते हुए भी आर्थिक तौर पर कमजोर होती थी या फिर बिना विवाह किये बच्चे या बच्चों की मॉए होती थीं या फिर तलाकसुदा मॉयें होती थी।अर्थात ये नारियों की नगरी थी।सिगमून्डसहोफ से ये ज्यादे दूर तो न था.फिर भी मै यहॉ आ गया।

पेट्रा से आखिरी बार मै इस नारियों की ही नगरी मे मिला था।अचानक होफ मे कैन्टिन की सीढियों पर बैठी पेट्रा दिख गई।आलता से रंगे पॉवों मे बिछिया.कोल्हापुरी चप्पल.जनपथ पर खरीदे छोटे छोटे शीशों से टॅके सलवार कुर्त्ते.गले मे एकार्ट का लिपटा दुपट्टा .हॉथों मे करीने से सजी मेंहदीं.कलाईयो मे लाह के मोटे मोटे कड़े.माथे पर एक नीली बड़ी सी बिन्दी।पेट्रा की नजरें किसी एक किताब में खोई हुई थी।अपने दाहिने पैर से वो एक बग्गी हल्के हल्के डुलाये जा रही थी।

पहले सोचा कि आगे ही बढ जाऊँ।बीते दिनो की तरह ये बीती पेट्रा ही तो थी।मन नही माना।समीप गया.तो उसने अपनी नजरें उठाई।उसने कुछ कहा तो नही.जरा खिसक कर अपने बगल मे मेरे बैठने की जगह बना दी।बैठने से पहले बग्गी मे झॉका।एक सॉवला सा दुबला पतला लड़का अपनी निपल से खेले जा रहा था।

ःलड़का है या लड़की!

ःलड़का

क्या नाम रखा है!

ःडोरियान देवेन्द्र जेमन।

ःये देवेन्द्र विकाश की वजह से!

ःनही!ये विकाश के चाचा का नाम है।मेरा बहुत ख्याल रखा करते थे।

ःतुम कैसी हो!विवाह वगैरह किया या नही!

ःकिससे करती!मुझसे सारे सम्बन्ध तोड़ कर तुम्हारा विकाश न जाने फीनलैंड के किस शहर मे जा बैठा है।आखिर तुमलोग जिम्मेवारियों से इस कदर डरते क्यों हो!क्या छवि बना रखी थी मैने तुमलोगों के बारे मे!जो आज टूट कर बिखरने की कगार पर खड़ा है।तुमलोग बस नाटक करना जानते हो।

ःये सारा गिला शिकवा मुझसे क्यो!विकाश से क्यों नही!जब तुम उसके संग प्यार के हिंडोले मे झूल रही थी.तब तुम्हे कभीं मेरी याद आई थी।तुम मुझे अपने छवि के टूटने की धमकी दे रही हो।जब मेरा मन टूटा था.गई थी उसकी आवाज तुम्हारे कानों मे! मै तुम्हे

कैसा भविष्य देता. ये मै नही जानता. पर तुमने इसका मौका ही कब दिया!मेरे मन भूमि का एक अन्चल ही तुमने बंजर कर डाला। उस पर धान की एक बाली तक नही उगाई जा सकती। तुम एक बात और सुन लोः मै जर्मनी न तो अपने देश का प्रतिनिधि बन कर आया हूँ और न तुमलोगों का दुख ही बॉटने आया हूँ। न जाने तुमलोगों को मेरे बारे मे इस तरह की गलतफहमी क्यों हो जाती है! .कहके मै उठ खड़ा हुआ।

देखते ही देखते आसमान मे बादल घिर आये। अच्छी भली धूप निकली हुई थी। स्नात चारो तरफ ॲधेरा छा गया। वर्षात की पहली बौछार ही मुझे नखशिख भिंगो मारी। कहॉ आश्रय ढूँढने जाता!वापस घर की ओर पड़ते ओलों की मार खाते चल पड़ाः

प्रमोद कुमार सिंह
बर्लिन
तेरह सितम्बर दो हजार दस